ममत्व- विसर्जन : अपरिग्रह

- महाश्रमण मुदित कुमार

मुक्त आत्मा पूर्णतया विशुद्ध होती है। संसारी आत्मा पूर्ण विशुद्ध नहीं होती। ज्यों-ज्यों आध्यात्मिक विकास होता है, जीव पूर्ण विशुद्धि की दिशा में गतिमान होता है। पूर्ण विशुद्धि (सिद्धावस्था) की प्राप्ति के पूर्व केवलज्ञान की उपलब्धि आवश्यक है। सब केवलज्ञानी तीर्थंकर नहीं होते। उनमें से कुछ जीव ही तीर्थंकरत्व को प्राप्त होते हैं। भगवान महावीर के समय यहां केवली मुनि सैकड़ो थे, परन्तु तीर्थंकर एकमात्र भगवान महावीर थे।

तीर्थंकरत्व प्रकृष्ट पुण्य प्रकृति के उदय से प्राप्त होता है। श्रमण भगवान महावीर के तीर्थ में नौ जीवों ने तीर्थंकर नाम गोत्र कर्म अर्जित किया था। ठाणं में उसका वर्णन प्राप्त है। वह संक्षेप में इस प्रकार है –

१. श्रेणिक – यह मगध देश का राजा था। यह भरत क्षेत्र (जम्बूद्वीप) में आगामी चौबीसी में महापदम नाम का प्रथम तीर्थंकर होगा।

२. सुपार्श्व – ये भगवान महावीर के चाचा थे। ये सूरदेव नाम के दूसरे तीर्थंकर होंगे।

३. उदायी – यह कोणिक का पुत्र था। यह सुपार्श्व नाम का तीसरा तीर्थंकर बनेगा।

४. पोटिल अनगार – ये स्वयंप्रभ नाम के चौथे तीर्थंकर बनेंगे।

५. दृढ़ायु – ये सर्वानुभूति नाम के पांचवें तीर्थंकर बनेंगे।

६.७. शंख तथा शतक – ये दोनों श्रावस्ती नगरी के महावीर के श्रावक थे। शंख का जीव उदय नाम का सातवां तीर्थंकर और शतक का जीव शतक नाम का दसवां तीर्थंकर बनेगा।

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

८. श्राविका सुलसा – यह राजगृह के राजा प्रसेनजित के रथिक नाग की भार्या थी। यह निर्मम नामक सोलहवां तीर्थंकर बनेगी।

९. श्राविका रेवती – यह भगवान महावीर के समय एक गृहिणी थी एक बार भगवान महावीर मेढ़िक ग्राम नगर में आए। वहां उनके पित्तज्वर का रोग उत्पन्न हुआ और वे अतिसार से पीड़ित हुए। यह जनप्रवाद फैल गया कि भगवान महावीर गोशालक की तेजोलेश्या से आहत हुए हैं और छह महीनों के भीतर काल कर जाएंगे।

भगवान महावीर के शिष्य मुनि सिंह ने अपनी आतापना-तपस्या संपन्न कर सोचा - 'मेरे धर्माचार्य भगवान महावीर पित्तज्वर से पीड़ित हैं। अन्य तीर्थ यह कहेंगे कि भगवान महावीर गोशालक की तेजोलेश्या से आहत होकर मर रहे हैं। इस चिन्ता से दुखित होकर मुनि सिंह मालुका कच्छ वन में गए और सुबक-सुबक कर रोने लगे। भगवान ने यह जाना और अपने शिष्यों को भेजकर उसे बुलाकर कहा - 'सिंह ! तूने जो सोचा है वह यथार्थ नहीं है। मैं आज से सोलह वर्ष तक केवली पर्याय में रहूंगा। जा. तू नगर में जा। वहां रेवती नामक श्राविका रहती है। उसने मेरे लिए दो कुष्माण्ड फल पकाए हैं। वह मत लाना। उसके धर बिजोरापाक भी बना है। वह वायु नाशक है। उसे ले आना। वही मेरे लिए हितकर है।'

सिंह गया। रेवती ने अपने भाग्य की प्रशंसा करते हुए, मुनि सिंह ने जो मांगा, वह दे दिया। सिंह स्थान पर आया। महावीर ने बीजोरापाक खाया। रोग उपशांत हो गया। इस प्रकार श्राविका रेवती महावीर की स्वस्थता में सहायक बनी।

अठारह पाप क्रियाओं में पांचवीं है परिग्रह। ममत्व भाव से किसी पदार्थ प्राणी का परिग्रहण व संरक्षण परिग्रह है। स्थूल रूप से वस्तु आदि का ग्रहण न भी हो परन्तु यदि किसी के प्रति ममत्व व मूर्च्छा का भाव है तो भाव के स्तर पर तो ग्रहण हो ही जाता है। परिग्रह के दो प्रकार है – १. अन्तरंग परिग्रह २. बाह्य परिग्रह। राग भाव अन्तरंग परिग्रह है। रागभाव से बाह्य पदार्थो का ग्रहण व संग्रह होता है, वह परिग्रह है। प्रधानता अन्तरंग परिग्रह की ही है। उसके न होने पर बाह्य पदार्थ 'परिग्रह' संज्ञा को प्राप्त नहीं हो सकते। 'दसवेआलियं' का स्पष्ट उदघोष है – मुच्छा परिग्गहो वुत्तो – मूर्च्छा को परिग्रह कहा गया है। उसका परित्याग अपरिग्रह है।

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रीमद भगवद गीता में मूर्च्छा (आसक्ति) की श्रृंखला का सुन्दर चित्रण किया गया है –

ध्यायतो विषयान पुंसः, संङ्गस्तेषूपजायते।
संङ्गात संजायते कामः, कामात क्रोधोभिजायते।।
क्रोधादि भवति सम्मोहः, सम्मोहात स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद बुद्धिनाशो, बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।

विषयों का चिन्तन करने वाले पुरुष की उन विषयों में आसक्ति हो जाती है। आसक्ति से उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है और कामनापूर्ति में विघ्न पड़ने से क्रोध उत्पन्न होता है।

क्रोध से अत्यन्त मूढ़ भाव उत्पन्न हो जाता है। मूढ़भाव से स्मृतिभ्रंश हो जाने से बुद्धि – ज्ञानशक्ति का नाश हो जाता है और बुद्धिनाश हो जाने से यह पुरुष अपनी स्थिति से गिर जाता है।

बाह्य परिग्रह अपने आप में पाप बन्धन का मूल कारण अन्तरंग परिग्रह है, मूर्च्छा है। परन्तु मूर्च्छा को परिपुष्ट करने में बाह्य परिग्रह का भी योगदान मिल जाता है। अतः उसका भी समुचित परिवर्जन आवश्यक हो जाता है। दूसरी बात, जिसके मूर्च्छा नहीं है, वह बाह्य पदार्थों का अनपेक्षित संग्रह क्यों करेगा ? 'अनासक्ति' शब्द की ओट में (हम तो भीतर से अनासक्त हैं, यह कहते हुए) पदार्थ संग्रह और विषयभोग करने वाले व्यक्ति कभी-कभी आत्मछली बन जाते है। वस्तुतः अनासक्ति हो तो वह स्तुत्य और अभिनन्दनीय है।

मुनि पूर्णतया अपरिग्रही होता है। श्रावक उसके स्थान पर इच्छा परिमाण व्रत को स्वीकार करता है, वह नवधा बाह्य परिग्रह का सीमाकरण करता है और उसके माध्यम से अन्तरंग परिग्रह को कृश करने की साधना करता है।

क्षेत्र (खुली भूमि), वास्तु (मकान आदि), हिरण्य (चांदी), सुवर्ण, धन, धान्य, द्विपद (दास आदि), चतुष्पद (गाय, भैंस आदि पशु-पक्षी), कुप्प (तांबा, पीतल आदि धातु तथा अन्य गृह सामग्री, चाल-वाहन आदि) – यह नौ प्रकार का परिग्रह श्रावक के लिए संयमनीय होता है।

संसार में अनेक प्रकार की शक्तियां हैं। उनमें अर्थ (धन) भी एक शक्ति है, इसे

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्वीकार नहीं किया जा सकता। अर्थ सुअर्थ रहे, वहां तक तो कोई चिन्ता नहीं, परन्तु जहां अर्थ अनर्थ करने वाला बन जाता है, तब विचारणीय स्थिति बन जाती है, इस संदर्भ में भिक्षु ग्रन्थरत्नाकर का निम्नांकित पद्य मननीय है –

प्रेम घटारण सजना रो, दुरगत नो दातार।
अणचिन्त्या अनर्थ करे, धन ने पड़ो धिकार।।

जो स्वजनों के प्रेम को घटाता है, जीव की दुर्गति करता है, अचिन्तित अनर्थ पैदा करता है, ऐसे धन को धिक्कार।

अर्थार्जन में साधनशुद्धि का संकल्प भी अपरिग्रहीवृत्ति को पुष्ट करता है। दूसरों का शोषण कर पैसा इकट्ठा कर धनवान बन जाना और नाम ख्याति के लिए कुछ दान देकर दानी कहलाना कौन-सा स्पृहणीय कार्य है ? ऐसे दान को दूर से ही नमस्कार कर पहले अर्थार्जन की शुद्धि पर ध्यान दिया जाना चाहिए, धोखा-धड़ी और शोषण का परित्याग किया जाना चाहिए।

व्यापारी ने नयी-नयी कपड़े की दुकान खोली। बार-बार उसके मन में एक ही विचार आता था कि दुकान का विकास कैसे हो ? कमाई ज्यादा कैसे हो ? येन-केन प्रकारेण वह धनाढयों की सूची में अपना नाम पढ़ने के लिए समुत्सुक था।

आवश्यकता की पूर्ति एक बात है और आकांक्षा की पूर्ति दूसरी बात है। आवश्यकता पूर्ति की मांग को असंगत नहीं कहा जा सकता। किन्तु महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति और वह भी अवैध तरीकों से समुचित कैसे हो सकती है ?

रात्रि का प्रथम प्रहर। व्यापारी ने दुकान को बढ़ाया (बन्द किया) और घर चला आया। भोजन करने के बाद शयनार्थ वह शय्या पर पहुंच गया। वह लेटा, पर नींद नहीं आई। संकल्प-विकल्पों का सिलसिला चालू था। उन्हें विराम भी उसने कहां दिया था ? न तो उसने शयन से पूर्व नमस्कार महामंत्र जैसे पवित्र मन्त्र का स्मरण किया और नही उसने आत्म निरीक्षण का प्रयोग किया। सत्साहित्य का स्वाध्याय भी नहीं किया। परिग्रह (कमाई) का संकल्प उसकी तृष्णाग्नि को प्रदीप्त कर रहा था। करवटें बदलते-बदलते आखिर उसे नींद अवश्य आ गई, पर गहरी और निश्चिन्तता भरी नींद का सुख उसे सुलभ नहीं हुआ। जिन विचारों की उधेड़बुन में वह सोया था, उन्हीं को अब वह चलचित्र के दृश्यों की भांति सपने के रूप में देखने लगा। वह देखता है कि प्रातःकाल का समय हो गया है।

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

स्नान और प्रातराश कर मैं दुकान में पहुंच गया हूं। एक ग्रामीण आया है और वह मुझे कपड़ा देने के लिए कह रहा है। उस (ग्रामीण) ने पूछा – सेठ साहिब ! अमुक कपड़े का क्या दाम लेंगे ?

वस्तुतः मूल्य था प्रतिमीटर दो रूपया, परन्तु व्यापारी ने सोचा, अभी पैसा कमाने का अच्छा मौका है। यह ग्राहक तो भोला पंछी है। यह क्या समझेगा होशियारी को। दुकानदार ने कहा – चार रूपया एक मीटर। दुगुना मूल्य बता दिया। "सेठ साहिब ! यह तो बहुत ज्यादा कीमत है, मैं कैसे चुका पाऊँगा ?"

'अरे ! तुम्हें लेना हो तो लो, सुबह का समय है, बकवास मत करो।"

बेचारा ग्रामीण मजबूर था। लड़के की शादी सामने थी। उसने कहा – ठीक है सेठजी ! पांच मीटर कपड़ा दे दीजिए। भीतर में हर्ष विभोर और बाहर से नाराजगी दिखाते हुए सेठ ने ग्रामीण द्वारा याचित कपड़ा हाथ में लिया और कुछ कम मापते हुए उसने उसे फाड़ा। (यह सब कुछ स्वप्न में हो रहा है।) ज्योंही वस्त्र के फटने की 'चर-चर' आवाज आई, व्यापारी की नींद टूट गई, आंखें खुल गई। उसने सोचा –अरे यह आवाज कहां से आई ? इधर झांका, उधर झांका, आखिर पता चला–अपनी ही धोती अपने हाथ में आ गई और उसी को फाड़ डाला।

अपरिग्रह की पुष्टि के लिए आवश्यक है कि साधक शब्द, रूप, गन्ध, रस और स्पर्श– इन इन्द्रिय-विषयों के प्रति होने वाले प्रियता और अप्रियता के भावों से बचे, वैसा प्रयास और भावना का अभ्यास करे। अल्प, बहु, अणु, स्थूल, सचित और अचित्त–इस छह प्रकार के परिग्रह का तीन कारण, तीन योग से प्रत्याख्यान करने पर ५४ भंग अपरिग्रह महाव्रत के निष्पन्न होते हैं। पांच महाव्रतों के कुल २५२ भंग बनते हैं। पूरा विस्तार जानने के लिए विगत चार निबन्ध द्रष्टव्य हैं।

अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य –इस चतुर्विध आहार का रात्रि में भोग करने का तीन करण, तीन योग से प्रत्याख्यान करने पर रात्रिभोजन विरमणव्रत के ३६ भंग निष्पन्न होते हैं।

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org